भक्त हृदय के उद्‌गार

गर शिव रूप तूने धरना है,
नाग पे शय्या उनकी हो।
भव सागर में वह जीयें,
जीवन विषमय उनकी हो।।

विष पीयें शिव देख ज़रा,
कण्ठ से सर्प लिपटे रहें।
फिर भी सुख वह सबको दें,
क्षति किसी की नहीं करें।।

लाख भुलाये जीव उन्हें,
लाख उन्हें ठुकराया करे।
बार बार बहु बात कही,
दिल उनका वह तोड़ दे।।

कोई कुछ भी तुझे कहे,
तव मुख पे मुसकान हो।
यह चाहना गर हृदय में हो,
तो गंगे को पुकार लो।।

गर आपुनो स्थापति चाहते हो,
गंगे से मत बात करो।
गर शिव धरती पर लाना है,
तो गंगे का तुम नाम लो।।

-परम पूज्य माँ
12.11.1971
गंगा श्रद्धा प्राणप्रद (अर्पणा प्रकाशन)

अनुक्रमणिका

1. भक्त हृदय के उद्‌गार..
गर शिव रूप तूने धरना है..

3. आशीर्वाद - प्रेम, एकत्व और दिव्यता का पावन स्थल

8. ममत्व भाव रहित जो हो, वह आत्मवान हो जाता है..!
अर्पणा प्रकाशन - श्रीमद्भगवद्गीता - 'भगवद् बाँसुरी में जीवन धुन' 3/1-3

13. मिलन का सेतु यह ही है, राम भाव में रहा करो..!
मुण्डकोपनिषद्, द्वितीय मुण्डक 2/5

17. ऐ मुहब्बत, यह तेरा करिश्मा ही तो है..
श्रीमती पम्मी महता

20. जीवन के सत्य
प्रस्तुति - विष्णु प्रिया महता

24. शरणापन्न..
परम पूज्य माँ से पिताजी के प्रश्नोत्तर

32. गागर में सागर
श्रीमती सत्या महता

35. अर्पणा समाचार पत्र

39. समय की पुकार - 'श्रीमद्भगवद्गीता!'

सम्पादक की ओर से

गद्य में प्रस्तुत सभी लेख साधकों के प्रश्नों के उत्तर में परम पूज्य माँ द्वारा प्राप्त सत्संगों पर आधारित हैं और संकलन-कर्ता की निजी समझ के अनुकूल हैं। काव्य की पंक्तियाँ पूज्य माँ के मुखारविन्द से प्रवाहित दिव्य प्रवाह का अंश हैं; जिसे सुश्री छोटे माँ ने लेखनीबद्ध किया है। अपनी पूर्ण सामर्थ्य के अनुसार उसे ज्यों का त्यों प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। प्रस्तुति में किसी भूल के लिये हम क्षमा प्रार्थी हैं।

सम्पादक : *पूनम मलिक*
सह सम्पादक : *श्रीमती साधना पाल*

पता : अर्पणा आश्रम, मधुबन, करनाल,
132 037, हरियाणा भारत

श्री हरीश्वर दयाल, अर्पणा ट्रस्ट, मधुबन, करनाल 132 037 01, हरियाणा द्वारा मार्च 2024 को प्रकाशित

आशीर्वाद -
प्रेम, एकत्व और दिव्यता का पावन स्थल

कितने ही भाग्यशाली हैं हम.. जो परम पूज्य माँ की दिव्यता, विद्वता व स्नेहपूर्ण तदरूपता को वर्षों तक जीवन में पा कर धन्य धन्य हो गये.. वह, जिन्होंने अपने आराध्य में स्वयं को पूर्ण रूप से भुला दिया!

अपने इष्ट, अपने आराध्य से प्रेरित हो कर उन्होंने सभी धर्मों में सद्भावना रखते हुए उनकी निहित एकता को पहचाना। उन्होंने किसी को भी अपने से अलग नहीं समझा.. सभी के साथ पूर्ण तदरूपता का भाव रखते हुए उन्होंने सभी को अपना आप माना।

परम पूज्य माँ की स्मृति का यह ज्योतिर्मय स्थान, उनके श्रद्धालुओं के लिए तैयार किया गया है। क्यों ना आज हम सब मिल कर उनकी दिव्यता को धारण करें और भगवान जी को भक्तिपूर्ण भाव से अर्पित की गई उनकी प्रार्थनाओं के अनुसार अपने जीवन को ढालें।

आदेश तेरा मेरा धर्म भये..

परम पूज्य माँ, आज से आप ही का आदेश हमारे विचारों और हमारे कर्मों का मूल आधार बने।

हमें यही आशीर्वाद दें!

परम पूज्य माँ का समाधि स्थल -

हे राम मुझे कहीं ले चलो, जहाँ तेरे सिवा कोई न हो।
जो कुछ देखें मेरी अखियाँ, वहाँ तेरे सिवा कोई न हो।।

गर शिव रूप तूने धरना है,
नाग पे शय्या उनकी हो।
भव सागर में वह जीयें,
जीवन विषमय उनकी हो।।

राम चरण का पथिक हूँ मैं,
अब दर्शन की है प्यास।
धूलि बन वा चरण चढ़ूँ,
यही है अंतिम आस।।

कई रूप लिये कई बार प्रभु, भक्तन् को मिलने आते हो।
मैं न मानूँगी भक्तन् को, तुम दरस नहीं दिखलाते हो।।

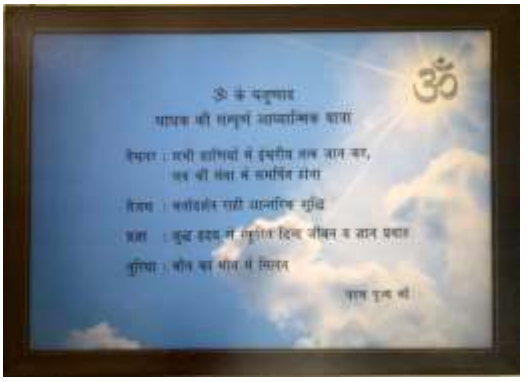

विषय भी तू और राम भी तू,
उस में भी कोई भेद नहीं।
गर राम यह अनुभव हो जाये,
तो रहेगा कोई खेद नहीं।।

कर्त्तव्य सेवा नित्य करूँ,
इसी में तुम्हारा नाम है।
आरती ख़ुद ही बन जाऊँ,
यही तुम्हारा नाम है।।!

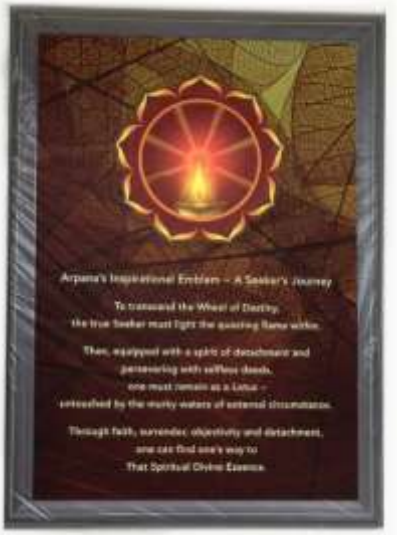

राम मिलन की बातें तो तुम, नित नित कहती रहती हो।
राम तो तेरे चित्त बसें, जरा आन्तर तो देखो।।

अनन्य भक्ति कहाँ पाऊँ मैं,
अनन्य भक्ति भी तुम ही हो।
कहाँ जाऊँ प्रेम याचना को,
पिया प्रेम निधि भी तुम ही हो।।

प्रेम भक्ति में खोये जो,
पतझड़ लगे बहार।
पत्थर कोमल शय्या भये,
जंगल भये फुलवाड़।।

भगवान यह सब कुछ तेरा है,
यही मान के भोग करूँ।
जिसको भी जहाँ देखूँ अब से,
उसमें ही तुझे देखूँ।।

कलियाँ बीन बीन राम मेरे,
तोरे मन्दिर में चढ़ाती हूँ।
हर कली से राम राम,
तेरा नाम ही लिखती जाती हूँ।।

राग नाम का छेड़ कर,
मदमस्त हुई तू गाती जा।
जो भी तान कहे मन रामा,
जीवन पायलिया बजाती जा।।

ममत्व भाव रहित जो हो, वह आत्मवान हो जाता है..

अर्जुन उवाच- ज्यायसी चेत्कर्मणस्ते मता बुद्धिर्जनार्दन।
तत्किं कर्मणि घोरे मां नियोजयसि केशव।।
श्रीमद्भगवद्गीता - 3/1

अर्जुन भगवान से कहने लगे :

शब्दार्थ :

1. **हे जनार्दन!**
2. **यदि कर्मों की अपेक्षा आप ज्ञान को श्रेष्ठ मानते हो,**
3. **तो फिर हे केशव! मुझे इस भयंकर कर्म में क्यों लगाते हो?**

तत्व विस्तार :

अर्जुन भगवान से कहने लगे कि हे जनार्दन,

क) आप मुझे आत्मा का ज्ञान देते हो;
ख) आप बुद्धि की बातें करते हो;
ग) आप योग की विधि बताते हो;
घ) आप इन्द्रिय संयम की बातें कहते हो;
ङ) फिर मुझे कहते हो कि मैं आपके परायण हो जाऊँ;

च) आप आत्म तत्व की बातें भी करते हो;
छ) आप अहम रहितता की बातें करते हो;
ज) आप संग त्याग की बातें करते हो;
झ) आप सुख दुःख, जय पराजय में समत्व भाव की बातें भी करते हो;
ण) फिर, यह भी कहते हो कि भोगैश्वर्य में चित्त नहीं होना चाहिये;
ट) बुद्धियुक्त मनी षीगण अमृतपद को पाते हैं, यह भी आपने कहा;
ठ) फिर नित्य समाधिस्थ की बातें भी आपने बताईं;
ड) सुख दुःख, शुभ अशुभ जो भी मिले, उसके प्रति न प्रसन्न होना चाहिये न द्वेष करना चाहिये, यह भी आपने कहा है;
ढ) फिर आपने कहा, जो सम्पूर्ण कामनाओं को और अहंकार को त्याग दे और ममत्व भाव रहित हो जाये, वह आत्मवान हो जाता है।

आप यदि इस सब ज्ञान को श्रेष्ठ मानते हो, तो फिर मुझे क्यों बार बार कहते हो कि मैं युद्ध करूँ? और वह भी इतना घोर तथा भयंकर कर्म, जिसे देख कर ही जी घबरा जाता है।

व्यामिश्रेणेव वाक्येन बुद्धिं मोहयसीव मे।
तदेकं वद निश्चित्य येन श्रेयोऽहमाप्नुयाम्।।
श्रीमद्भगवद्गीता - 3/2

अर्जुन ने भगवान से कहा :

शब्दार्थ :

1. **आप मिश्रित वचनों से मेरी बुद्धि मोहित करते हैं,**
2. **इसलिये वह एक बात निश्चय करके कहिये,**
3. **जिससे मैं कल्याण को प्राप्त होऊँ।**

तत्व विस्तार :

अर्जुन कहते हैं भगवान! आप विपरीत अर्थी वाक् कह कर मुझे मोहित क्यों करते हो? आपने तो मुझे और भी भ्रमित कर दिया है। आपकी बातें मुझे समझ नहीं आतीं। कभी कहते हो कि मैं युद्ध करूँ, कभी कहते हो कि मैं ऐसी बुद्धि बनाऊँ जो आपने बताई है!

आपकी बातें तो मैंने सुन लीं, अब आप निश्चय से बताइये कि :

1. मुझे क्या करना चाहिये?
2. मुझे कौन सा पथ लेना चाहिये?
3. मेरे लिये युद्ध रूपा भयंकर कर्म करना उचित है या नहीं?
4. क्या मेरे लिये युद्ध की अपेक्षा ज्ञान के आसरे बुद्धि का उपार्जन करना अधिक कल्याण कारक है?
5. इन दोनों में से जो आप श्रेयस्कर समझते हैं, वह पथ मुझे स्पष्टता से कहिये।

यह कह कर मानो अर्जुन साधक की समस्या की कह रहे हैं :

1. यह सब साधन मन को परिवर्तित करने के लिये हैं।

2. आपने जो कहा वह आन्तर परिवर्तन, दृष्टिकोण परिवर्तन और बुद्धि वर्धन के लिये कहा है।
3. पर साथ साथ आप युद्ध करने के लिये भी कह रहे हैं।

यह दोनों विरोधी से भाव लगते हैं मुझे, इसलिये मैं पूछ रहा हूँ। विरोधी पथ दिखते हैं तो चित्त भ्रमित हो जाता है। एक तो ज्ञान की बात है और दूजा उसके विपरीत, कर्म का पथ है। कर्मों में तो विषयों से सम्पर्क होगा ही, तब मैं क्या करूँगा?

क) जो पाना है वह सूक्ष्म स्तर पर पाना है। यह तो ज्ञान और ध्यान की बात है, तो स्थूल युद्ध रूप कर्म किये क्या होगा?
ख) आन्तर में मन को मनाना है, तो बाह्य शत्रु दमन किये क्या होगा?
ग) बुद्धि को ही बढ़ाना है, तो कर्म किये अब क्या होगा?

भगवान! यह दो पथ अलग अलग है, इन दोनों का समन्वय कैसे होगा?

यदि एक ओर मैं इतने घोर कर्म करूँ और दूसरी ओर उस ज्ञान की बात करूँ, तो शायद न इधर का रहूँगा न उधर का रहूँगा।

साधक की समस्या :

नन्हीं! आज कल भी साधक गण की यही समस्या है कि :

1. कर्म श्रेष्ठ है या ज्ञान श्रेष्ठ है?
2. कर्म श्रेष्ठ है, या एकान्त में चित्त का ध्यान लगाना श्रेष्ठ है?
3. जग में रहना श्रेष्ठ है, या जग का त्याग श्रेष्ठ है?
4. विषय सम्पर्क श्रेष्ठ है, या विषयों का त्याग श्रेष्ठ है।
5. लोगों के प्रति कर्तव्य निभाना श्रेष्ठ है, या लोगों को छोड़ देना और कर्मों का त्याग उचित है?
6. विषय त्याग करके स्थिर बुद्धि को ग्रहण करना चाहिये, या विषयों से सम्पर्क रखते हुए जीवन में कर्तव्य निभाना चाहिये?

सो मानो अर्जुन कह रहे हों कि भगवान :

क) आप एक ओर निर्भयता की कहते हो, दूसरी ओर कर्तव्य की बात कहते हो।
ख) आप एक ओर समत्व भाव को सराहते हो, दूजी ओर कर्म में प्रवृत्त होने की बात कहते हो।
ग) आप एक ओर निरहंकार की कहते हो, दूजी ओर मुझे विषय रमण की बात सुझाते हो।

यह सब बातें उसकी समझ में नहीं आई! जैसे आजकल अन्य साधकों को भी समझ में नहीं आता कि :

1. इन विरोधात्मक बातों का जीवन में समन्वय कैसे हो?
2. इन विपरीत कर्मों का आपस में मिलन कैसे हो?
3. इन वियोगी और विरोधी भावों का आपस में संयोग कैसे हो?

यानि, हम एकान्त में बैठ कर स्थिर बुद्धि बनायें, या जीवन के संग्राम में प्रवृत्त हो जायें!

अर्जुन भगवान से कह रहे हैं कि 'आप ही इसे स्पष्ट कहो'।

श्री भगवानुवाच

लोकेऽस्मिन् द्विविधा निष्ठा पुरा प्रोक्ता मयानघ।
ज्ञानयोगेन सांख्यानां कर्मयोगेन योगिनाम्।।

श्रीमद्भगवद्गीता - 3/3

शब्दार्थ :

1. **हे निष्पाप अर्जुन!**
2. **इस जहान में दो प्रकार की निष्ठा पहले मेरे द्वारा कही गई है।**
3. **सांख्य वालों की ज्ञान योग में**
4. **और योगियों की कर्मयोग में।**

तत्व विस्तार :

नन्हीं साधिका आभा!

1. सांख्य वाले ज्ञान में निष्ठा रखते हैं।
2. वे तत्व चिन्तन करके स्वरूप को समझना चाहते हैं।
3. तत्ववेत्ता बन कर समझते हैं कि वे ब्राह्मी स्थिति पा लेंगे।
4. उनकी निष्ठा लक्ष्य में होती है। वे श्रवण, पठन, चिन्तन इत्यादि को लक्ष्य पाने की विधि समझते हैं।
5. वे तत्व पाना चाहते हैं, यानि आत्मवान बनना चाहते हैं।
6. उस तत्व पर वे ध्यान लगाना चाहते हैं।
7. ज्ञान में रमण करके वे भगवान को पाना चाहते हैं।
8. वे अहम मिटाना चाहते हैं।
9. वे कर्तृत्व भाव तथा भोक्तृत्व भाव मिटाना चाहते हैं।
10. वे तन से तथा विषयों से ऊपर उठना चाहते हैं।
11. वे इन्द्रियों को रोकना चाहते हैं।
12. वे आत्मवान बनना चाहते हैं।

वे केवल मानसिक समझ से परम को पाना चाहते हैं। ऐसी निष्ठा वाले कर्म त्याग को श्रेष्ठ मानते हैं और शब्द ज्ञान में निष्ठा रखते हैं। इन्हें ज्ञान से संग हो जाता है, मानो वे ज्ञान में ही बह जाते हैं।

क) दूजे योगी गण भी परम को चाहते हैं, परन्तु कर्म में निष्ठा रखते हैं।

ख) वे कर्म पथ अपनाते हैं और कर्मों की राह से ब्राह्मी स्थिति को पाना चाहते हैं, परन्तु कर्म में निष्ठा रखते हैं।

ग) अन्त में जानो ये भी तो वही पाना चाहते हैं, जो सांख्य वाले चाहते हैं।

घ) ये कर्मों को श्रेष्ठ मान कर जीवन में कर्म करते हैं।

ङ) परन्तु जब कर्मों में संग हो जाता है तो यह राहों में ही रह जाते हैं।

ज्ञानी समझे कर्तव्य नहीं,
कर्मनिष्ठ सुने न ज्ञान को।
दोनों राहों में उलझें,
न पायें भगवान को।।

नन्हीं जान्!

1. जीवन में ज्ञान और कर्म दोनों का संयोग अनिवार्य है।
2. ज्ञान का अभ्यास कर्मों में ही होता है।
3. ज्ञान का प्रमाण कर्म ही होते हैं।
4. कर्मों का राज़ ज्ञान में ही छुपा होता है।

5. कर्म को कहें ज्ञान की राह, यानि जिस राह से ज्ञान जीवन में छा जाता है, वह कर्म ही हैं। सो द्वौ मिलन होना ही होगा। अब भगवान बतायेंगे कि यह कैसे हो।

प्रथम **'निष्ठा'** को सविस्तार समझ ले :

1. निष्ठा का अर्थ है उस विषय में स्थिति जिसमें मन ठहरा हो, जिसमें प्रगाढ़ विश्वास और अनुराग हो।
2. निष्ठा का अर्थ है दृढ़ता।
3. निष्ठा का अर्थ है वह चरम बिन्दु, जिसे पाने के लिये जीव अपने जीवन की बाज़ी लगा देता है।
4. जिसमें निष्ठा होती है, जीव उसे पाने के लिये पूर्ण भक्ति तथा श्रद्धा से प्रयत्न करता रहता है।

नन्हीं! विश्वास, अनुराग, भक्ति, श्रद्धा इत्यादि को निष्ठा कहते हैं।

स्वरूप और रूप :

नन्हीं! ज्ञान स्वरूप है, तो कर्म उसका अनिवार्य रूप है। ज्ञान ब्रह्म है, तो कर्म उसकी निहित अंगिनी प्रकृति है। ज्ञान मौन है, तो कर्म उसका प्राकट्य है। ज्ञान चेतन घन है तो कर्म उसका प्रमाण है। ज्ञान स्थिति है, तो कर्म उसका रूप है। इस नाते ज्ञान और कर्म दोनों अखण्ड हैं।

मिलन का सेतु यह ही है, राम भाव में रहा करो..

यस्मिन् द्यौ: पृथिवी चान्तरिक्षमोतं मन: सह प्राणैश्च सर्वै:।
तमेवैकं जानथ आत्मानमन्या वाचो विमुञ्चथामृतस्यैष सेतु:।।

मुण्डकोपनिषद् - 2/2/5

अर्थात्:

जिसमें स्वर्ग पृथ्वी और उनके बीच का आकाश तथा समस्त प्राणों के सहित मन गुँथा हुआ है, उसी एक सब के आत्मरूप परमेश्वर को जानो; दूसरी सब बातों को सर्वथा छोड़ दो, यही अमृत का सेतु है।

तत्व विस्तार:

पृथ्वी लोक यह द्यू लोक, आन्तर लोक उसी में है।
बाह्य लोक यह मनो लोक, यह हृदय लोक उसी में है।।1।।

समस्त प्राण सहित मन, अन्त:करण उसी में है।
सम्पूर्ण यह इन्द्रिय गण, भावी मन उसी में है।।2।।

स्थूल वही सूक्ष्म वही, कारण भी रे वह ही है।
महाभूत तन्मात्रा भी, प्रकृति भी वह ही है।।3।।

विराट रूप हिरण्यगर्भ, ईश्वर सत्ता वह ही है।
विश्व वही अरे तैजस भी, और प्रज्ञा भी वह ही है।।4।।

इन्द्रिय लोक यह मनो लोक, हृदयलोक भी वह ही है।
उत्पत्ति स्थिति वही, लय अवस्था वह ही है।।5।।

जागृत स्वप्न सुषुप्ति भी, मन रे जान ले वह ही है।
भाव प्रवाह वह भाव भी, भाव रहित भये वह ही है।।6।।

तम जग रज मन वह ही हैं, सत्त्व हृदय भी वह ही है।
बाह्य प्रज्ञ आन्तर प्रज्ञ, हृदय मौन भी वह ही है।।7।।

श्रवण ध्यान समाधि वह, शास्त्र गुरु और आत्म वह।
वृक्ष फल भोगी पक्षी वह, द्रष्टा पक्षी आत्म वह।।8।।

अखण्ड रस अद्वैत तत्व, एक रस रे वह ही है।
अजर अमर अविनाशी, परम सत्त्व रे वह ही है।।9।।

सर्वोपरि अधिष्ठान, सर्व आश्रय वह ही है।
सर्व वित्त सर्वज्ञ वह, ज्ञान स्वरूप रे वह ही है।।10।।

अक्षर ब्रह्म सत स्वरूप, परम चेतन वह ही है।
सर्वेश्वर वह परमेश्वर, सर्वात्म रे वह ही है।।11।।

अखिल रूप पुरुषोत्तम, विश्व रूप रे वह ही है।
विराट रूप वह आप धरे, विश्वात्म रे वह ही है।।12।।

ब्रह्मा विष्णु महेश वही, विश्वेश्वर इक वह ही है।
शिव रूप महेश्वर वह, जगदीश्वर इक वह ही है।।13।।

अचिन्त्य वह अग्राह्य वह, प्राप्तव्य पर वह ही है।
अतीन्द्रिय तत्व जानो उसको, ज्ञातव्य बस वह ही है।।14।।

अन्य चाह मन छोड़ दे, वाँछित तत्व इक वह ही है।
नितान्त भाव अन्य त्यजो, भावनीय इक वह ही है।।15।।

हो एक चाह एक लग्न, अब एक वचन ही तेरा हो।
बस राम राम फिर राम राम, नाम कथन ही तेरा हो।।16।।

मिलन का सेतु यह ही है, राम भाव में रहा करो।
अन्य शब्द सब छोड़ करी, राम राम ही कहा करो।।17।।

चेतावन साधक को रे करें, अन्य भाव अब नहीं बहें।
एकचित्त इक भावना होई के, नाम में मग्न रहे।।18।।

निरन्तरता उसमें आये, तीव्र संवेग रे हो जाये।
वही राम को पा सके, जो उसी में खो जाये।।19।।

जो है सब बस वह ही है, और कहीं कुछ है ही नहीं।
व्यक्त अव्यक्त बस वह ही है, परम बिना कुछ है ही नहीं।।20।।

सर्व लोक में यहाँ कहें, मन ही तो रे छाया है।
पूर्ण जग जो देख रहे, मन ही गूँथ कर आया है।।21।।

बस रे राम सब राम है, राम भाव तू जान ले।
सत्त्व तत्व बस एक है, इसको अब पहचान ले।।22।।

बार बार वह यही कहें, निरन्तर ध्यान रे उसका करे।
तनो कर्म जो हुआ करे, मन तो उसमें ही रे रहे।।23।।

अज्ञान का घूँघट पहरे जो, देख री वह खुल जायेगा।
अहम् संग और मम का जो, आवरण है धुल जायेगा।।24।।

बस रे उसी को जान ले, अंग अंग वह छाया है।
माया रूप भी जान ले, वह ही तो धर आया है।।25।।

बस उसको ही सत्त्व सार, अखण्ड रूप में जान ले।
जो है सब बस राम है, राम रूप उसे जान ले।।26।।

स्थूल रे जो तू देख रहा, कर्मण का वह खेल है।
कर्म गति का राम पति, उसका ही तो खेल है।।27।।

संकल्प वा का हो चुका, संकल्प रूप रे धर आया।
बाह्य जगत जो देख रहे, संकल्प का ही है जाया।।28।।

कारण में जो कर्माशय, बीज रूप में रहते हैं।
उसका कारण वह ही है, वही यहाँ पर कहते हैं।।29।।

सूक्ष्म में स्वभाव भाव, श्रद्धा मन जो है तेरे।
कारण से वह प्रकटे है, परम में वा रूप धरे।।30।।

स्थूल रूप जो देखे है, कार्य कारण समुदाय वह।
ब्रह्माण्ड चक्र रे यह ही है, कर्मफल चलाये जो।।31।।

मिलना न मिलना कोई नहीं, चक्र को यह जान लो।
परम तत्व तो है परे, राज़ यह तुम जान लो।।32।।

यही कहें वह बार बार, आत्म तत्व को जान लो।
अद्वैत अखण्ड है एक रस, पूर्ण जग को जान लो।।33।।

लो स्वप्न की उपमा अब दें, स्वप्न द्रष्टा ईश्वर है।
भाव वृत्ति जड़ चेतन, जो है सब बस ईश्वर है।।34।।

अनेक लोक तू वहाँ धरे, वा का ही विस्तार है।
पूर्ण जग का जान ले, एक वही आधार है।।35।।

17-9-61

ऐ मुहब्बत, यह तेरा करिश्मा ही तो है..

श्रीमती पम्मी महता

आप ठीक फ़रमाते हैं हे परवरदिगार, जब आप में आस्था हो जाये तो फिर विचार नहीं, निर्विचार की स्थिति आ जाती है.. तभी आपका हर वाक्, जीवन को आपके कहे पे चलने की प्रेरणा देता है.. पर यह अंधविश्वास नहीं कहलाता।

आपने तो अपने क़दमों से चल कर ही रहगुज़र दी है.. इसीलिये आस्था का जन्म होता है और पथ पथिक के जीवन को आप एक स्थिर ढलान दे देते हैं.. जो यह जीवन आप ही की धुरी के इर्द-गिर्द घूमता चले.. एक दृढ़ निश्चय के साथ! आपसे पाये उस विश्वास के साथ, जिसे पाकर फिर क़दम डोलते नहीं.. मन में संशय नहीं उपजते। यह तो आपसे पाई वह मनःस्थिति है, जहाँ आंतर बिलकुल शून्य सा होकर ठहर जाता है।

आज आंतर में कुछ भी तो नहीं है, जो ठाठें मार रहा हो.. ऐसे लगता है, आपके प्रेम सागर का गम्भीर स्वर ही आंतर बाहर छाया हुआ है। आपके श्री चरणन् के स्पर्श की ही मन में चाहना है। आप माँ के श्री चरणन् सों लिपटी रहूँ, यही दुआ करती हूँ.. इस हृदय के सारे बाँधों से इसे मुक्त करी आपके बहाव में बहने को बेताब, इस मन को बहने दीजिये.. आपके श्री चरणन् में चढ़ने को यह आंतर लालायित हो उठा है, 'हरि ओम् हरि ओम्' की ध्वनि से ही यह ध्वनित हो रहा है। अद्भुत, अतीव अद्भुत दर्शनों का सुख पाये हुये हूँ.. आप ही की करुण कृपा से! ऐ मुहब्बत, यह तेरा करिश्मा ही तो है या कहूँ असीम अनुग्रह ही है।

इस मुहब्बत को क्या नाम दूँ? जो भी दूँगी बहुत ही न्यून होगा.. क्योंकि आप ख़ुदा का ही करम है, जो इस आंतर को पूर्णतया पावन करने के लिये आप कितने रूप धरते हैं। सच माँ, आज तो बात ही निराली है। कैसी शुभ व मंगलमयी घड़ी है.. चहुँ ओर छाई आप ही की लालिमा है! आप ही

आप इसे नज़री आ रहे हैं। कितनी अद्भुत व निराली आप की छवि को कौतूहलवश देखे ही चली जा रही हूँ.. बार-बार करबद्ध होई आप श्री हरि माँ को नमस्कार दिये जा रही हूँ।

सच ही आप मुझे अपने समेत अपना सभी कुछ देने चले आये हैं। आपके इन्हीं क़दमों पे परवान हो जाऊँ.. कैसी अवस्था है इस हृदय की? क्या बताऊँ माँ.. कभी आँसू ढलते हैं तो कभी मन ही मन मुस्कुरा उठती हूँ। क्या बताऊँ हृदय की अवस्था, जो आप ही आपका पथ निहारे चली जा रही हूँ। तुझी पे वार दूँ यह जीवन अपना, यही दिल से दुआ निकलती ही जा रही है। हर श्वास में आप ही आप बस जायें, यही दुआ प्रभु जी करती हूँ।

ऐसा लगता है आज तो सारी कायनात ठहर सी गई है.. आप ही के भव्य, विलक्षण व दिव्य दर्शन पाने के लिये! समझ नहीं पा रही, क्या होता जा रहा है मुझको? यह ग़रीब, आज आप ग़रीब

नवाज़ से नवाजी गई हूँ। आप ही आज मुझे वरने आ गये। कैसे आदर सत्कार करूँ तोरा? कहाँ आपको बिठाऊँ प्रभु जी! कैसे अंग लगाये यह पतिता.. जिसके स्पर्श से ही सभी दूषित हो जाता है। मगर रोकूँ भी तो रोकूँ ख़ुद को कैसे, हे प्रभु जी.. आप ही आ बतायें इसे। मेरा हृदय छलक छलक जाता है। आपके श्री चरणन् में लोटता जाता है।

क्या कहूँ हे जगदीश्वर, आपको कही कही भी कुछ नहीं कह पाती हूँ। आप ही ने आवाज़ देई बुलाया इसे। यह आपका प्यार उठाऊँ भी तो कैसे? मगर आपके इसी प्यार पे प्यार आता जा रहा है मुझे। इसी पे मिट जाने की इच्छा उठी उठी आती है बार बार। इन्हीं आपके क़दमों पे समर्पित हो जाऊँ यही दुआ करती हूँ बारम्बार.. आप ही से! आज उठा दें हे श्री हरि माँ, सारे प्रतिबन्ध.. और क़दमों से अपने लिपट जाने दें मुझे। अपने इन अलौकिक दर्शनों में इसे खो जाने दें, हे श्री हरि नाथ। यही करबद्ध प्रार्थना मेरी है आपसे।

आप इतनी इंतहा में सभी देकर भी ख़ामोश हैं। सच माँ, आप उदासीन का प्रेम ही है.. आप ही के अपनाये इस हृदय में तरंगे उठ रही हैं आज। आप ही में मिट कर आप ही में समा जाऊँ, यही सविनय विनय है मेरी आपसे!

जानती हूँ, आंतर की कालिमा के सिवा कुछ भी नहीं है पास मेरे.. इसे ही चढ़ा कर अपने क़दमों में अपने से सनाथ हो जाने दें इसे! झुकाव आपका नाम है, इन्हीं हरि चरणन् पर सदा सदा के लिये झुका लें इसे.. माटीवत जीने का परम सौभाग्य ही आप दे दें मुझे!

याद आया, ऐसे पलों में आपने इसे कहा था, 'मैंने बहुत प्रतीक्षा करी, ज्ञान से उठ करी प्रीत में आने के लिये, तेरी!' धन्य धन्य हुई जा रही हूँ व कृतज्ञ भाव से आपके श्री चरणन् को स्पर्श करी उनकी माटी सीस चढ़ाती हूँ! हे कल्याणी, मेरे कल्याण का पथ खोल करी कैसे कैसे निज कर्मों से आप माँ ने नवाज़ा है इसे। आगे भी आप ही सम्भाल कर ले चलिये जो आप ही आप में मिट पाऊँ, हे श्री हरि नाथ मेरे! ❖

जीवन के सत्य

प्रस्तुति - विष्णु प्रिया महता

साधकों के प्रश्नों के प्रत्युत्तर में पूज्य माँ ने जीवन की कुछ मूल समस्याओं का विश्लेषण और समाधान दिया है। इससे दिशा निर्देश प्राप्त कर साधक अपने जीवन को सही दिशा में ले जा सकते हैं।

प्रश्न : विपरीत परिस्थिति में मन विचलित क्यों हो जाता है?

पूज्य माँ : जीव के लिए विपरीतता का अर्थ है - उसकी चाहना का विरोध! इंसान नाराज़ तभी होता है जब उसे कोई इज्ज़त, कोई आसन नहीं मिलता। इंसान सोचता है कि मैं बड़ा लायक हूँ परन्तु जब दूसरा यह नहीं मानता.. तो वह नाराज़ हो जाता है। जहाँ उसकी न चली, वही उसके लिए विपरीत परिस्थिति बन गई। यदि किसी ने ऐसा वाक् कह दिया जो उसे पसन्द नहीं, तो वह भी विपरीत परिस्थिति बन गई। यदि किसी ने कोई ऐसा कर्म कर दिया, जो उसे पसन्द नहीं, तो वह भी उसके लिये विपरीत परिस्थिति बन गई।

आप कहते हो जो मैं कहूँ सो हो। यदि वह न हो तो वह विपरीत परिस्थिति है। अपनी चाहना के विरुद्ध जो भी है, वह विपरीत परिस्थिति है। तुम्हारे जीवन का सुख इसी पर आश्रित है, 'जो मैंने कहा सो क्यों नहीं हुआ?' यदि तुम्हारे मिलने-जुलने वाले पचास व्यक्ति हैं, अब यदि तुम उनकी बात नहीं

मानते, तो यह उनकी विपरीत परिस्थिति है और यदि वे तुम्हारी नहीं मानते, तो वह तुम्हारी विपरीत परिस्थिति है। यदि तुम इतना जान लो कि दूसरे में विपरीतता तुम्हें इसलिये लगी, क्योंकि उसने तुम्हारी बात नहीं मानी, तो वह विपरीत नहीं रहेगा।

तुम दूसरे को पसन्द करते हो क्योंकि वह अनुकूल है। तुम दूसरे को दूसरे के लिये पसन्द नहीं करते। माँ कहती है उसे अपने बेटे से प्यार है.. परन्तु यदि वह बेकाबू हो गया तो कह दिया, 'वह घर से निकल जाये।' तो क्या यह प्यार है? तुम्हारा प्यार है वृत्तियों का, यानि मन का। मन दूसरे को फँसाने के लिये अपना जाल बिछाता रहता है। वह अपने को अच्छा बना कर दिखाता है और उसमें दूसरे को फँसा लेता है। जिस प्रकार मकड़ी अपने जाले में फँसाकर कीड़े का खून चूस लेती है और फिर उसे बाहर फेंक देती है, इसी प्रकार मन ने तो जाल बिछाया है। मन के विपरीत वह है, जो उसकी न माने। मन की उससे बनती है, जो उसके अनुकूल है। जो उसकी बात अक्षरशः माने, मन की वहाँ दोस्ती हो जाती है। यह दोस्ती क्या हुई? यही मन का स्वरूप है।

वृत्ति निरोध अनिवार्य

इसलिये शास्त्रों में कहा है, वृत्ति निरोध कर। वृत्तियों को सर्पिणी कहा है। उन्होंने तुम्हारे हृदय को बिल बना लिया है और यह इन्द्रियाँ वृत्तियों की बिलों के मुँह हैं। वृत्तियाँ वहाँ लिपट जाती हैं और चारों तरफ अपना ज़हर फैला देती हैं। इनको छोड़ो, इनका कोई लाभ नहीं। वृत्तियों को छोड़े बिना प्रेम नहीं आयेगा। यदि चाहना यह है कि दूसरा बदल जाये और फिर कहो कि वहाँ प्रेम है, तो यह बनता नहीं। प्रेम की निशानी यह है - तू बदल या न बदल, मुझे प्रेम है तुझसे।

प्रेम में विपरीतता अथवा अनुकूलता का भेद नहीं

प्रेम तो वह है जो विपरीतता में भी बना रहे.. जो केवल अनुकूलता में रहे, वह प्रेम क्या? किसी ने आपकी सब बातें मान लीं, आपकी ख़ूब ख़ातिरें की, आप कहते हो उससे प्रेम है। यह भी क्या प्रेम है? यदि इस कसौटी पर तोलें तो सारा जहान प्रेमी है। परन्तु यदि सच्ची कसौटी से तोलें तो एक भी प्रेम करने वाला नहीं मिलेगा। प्रेम वह नहीं जो अनुकूलता में किया जाये, प्रेम तो वह है जो प्रतिकूलता में भी बना रहे। प्रेम में पूरी आज़ादी भी हो। एक पल में कह सको, भाग जाओ यहाँ से.. और तुम्हें कोई फ़र्क़ न पड़े। तमाचा भी लगा सको, परन्तु फिर भी हाथ न उठे।

बलवान ही अहिंसक बन सकता है। वह क्या अहिंसा करेगा - जो भय के कारण कुछ कह ही नहीं सकता! कोई प्रेमवान हो, तभी दूसरे की विपरीतता भी देख सकेगा, नहीं तो नहीं दीखती।

आन्तर में जब तुम ज्ञान के दृष्टिकोण से देखते हो तो कहते हो.. बात तो यह ठीक है। इसने जो कहा है, इसमें इसकी अपनी तो कोई रुचि नहीं, कोई संग नहीं। यह तो मन की तुला ने तोला.. करने

के समय या तो वहाँ अटक जाते हो, क्योंकि सलाह जो नहीं है। मन कहता है, 'मैं क्यों करूँ - लोग क्या कहेंगे?' शरीर का एक प्रकार का ऐसा स्वभाव बन गया है - वह आदत शनैः शनैः ही जायेगी।

प्रश्न : हर परिस्थिति में सुखी कैसे रहा जा सकता है? मन ध्यान में कैसे टिके?

पूज्य माँ : पहले देखो कि सुख कहाँ है? मनो संघर्ष ही जीव को दुःखी करता है। जब आन्तर में सुखी हो जाओगे तो ध्यान स्वतः ही लग जायेगा। समझना तो केवल इतना है कि दूसरे का भी मन है। सुख कहते हैं अपने आपको भूल जाने को.. जो सदा अपने को भूला रहे, वह सदा सुखी है। उद्विग्नता का नितान्त अभाव ही सुख है। द्वन्द्वपूर्ण मन ही दुःख लाता है। सुखी वह है जो अपने को भूल जाये.. अपने को याद रखना है मोह। अपने आन्तर में अजपा जाप चल रहा है 'मैं तन हूँ'। जो यह जान गया कि मैं तन नहीं और वह तन से उठ गया.. तो बिन जाने ही उसका अजपा जाप शुरू हो गया कि 'मैं तन नहीं हूँ, मन नहीं हूँ, बुद्धि नहीं हूँ।' उसका ध्यान अपने तन, मन, बुद्धि पर हो ही नहीं सकता। जो कहता है 'मै तन नहीं', उसके तन का कोई चाहे जितना भी अपमान कर ले, उसे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता। यह तन या दूसरे का तन, दोनों ही तन माटी के बुत हैं, बराबर हैं.. एक समान हैं।

स्थायी सुख

जिसका अपने मन पर काबू नहीं, उसका सुख स्थायी नहीं। जिसका अपने मन पर काबू है, उसका सुख अविचलित है। सुखी तब होवोगे यदि दुःखी नहीं हो सकते.. जो दुःखी हो सकता है वह सुखी कैसे हो सकता है? संसार में दुःख-सुख मिश्रित हैं। कुछ अनुकूल मिल गया तो सुखी हो गए, प्रतिकूल मिल गया तो दुःखी हो गये। यह तो कोई सुख न हुआ.. सुखी तो वह है जिसे दुःख घेर न सके.. विपरीत परिस्थिति तंग न कर सके... जो विपरीतता में भी सुखी हो, जिसका मन अपने काबू में हो। इसलिये कहते हैं जो अध्यात्म पथ पर चलने लगे, वह महासुखी हो जायेगा।

साधक भी रोता है, परन्तु वह इसलिये रोता है कि 'मैं क्यों नहीं बदलता? मेरा मन क्यों नहीं बदलता? मेरे पास तो इतनी बुद्धि भी नहीं जो अपने मन को मना सके।' वह दूसरों को बदलने की कोशिश में दुःखी सुखी नहीं होता।

आपको यह समझना चाहिये कि यह मन एक बच्चे की भाँति है। इसकी रुचि का परिवर्तन करना चाहिये। इसे लानत न दो, मन को दुष्ट न कहो, इसकी रुचि ही बदल दो।

अपने मन की साधक रूपा वृत्ति को अलग कर लें और कहें, 'चल बुद्धि! मैंने तुझे देख लिया! तू एक छोटा सा मन भी न सम्भाल सकी! सब जगह तुझे दुःख मिला, इसका क्या लाभ? ऐ मन! मैंने तुझे भी देख लिया! आज तलक क्या तूने कभी मुझे सुख दिया? ऐ बुद्धि! तेरे साथ रहकर इतने निर्णय किये, माना कोई नहीं!' मन रूपा बच्चे पर इतना काबू बनाओ बुद्धि का.. उससे तो कोई दोस्ती भी नहीं आपकी! साधक वृत्ति अपनी बुद्धि को कहे, 'हे बुद्धि! तुझे बहुत गुमान है अपने मन पर? पर तेरी तो एक भी न चली!'

फिर बुद्धि भी ठीक चलने लगेगी! नहीं तो बुद्धि की आदत है दूसरों पर कलंक लगाना। यदि बुद्धि एक बार यह समझ ले कि मैं तो बुद्धू हूँ, तो काम बन जाए। जब तक यह नहीं समझोगे, मन में चैन नहीं आयेगी - तब तक भिखारी ही रहोगे! अपने सुख के लिए दूसरों पर आश्रित ही रहोगे। सो, अपने मालिक आप बनो, सुख इसमें ही निहित है।❖

शरणापन्न

पिता जी - गीता में भगवान ने कहा हैः

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।। (18/66)

अर्थात्- 'सब धर्मों को अर्थात् सम्पूर्ण कर्मों के आश्रय को त्याग कर, केवल एक मुझ सच्चिदानन्दघन वासुदेव परमात्मा की ही अनन्य शरण को प्राप्त हो। मैं तुझे सम्पूर्ण पापों से मुक्त कर दूँगा। तू शोक मत कर।'

यह सर्व धर्म का त्याग कौन सा और कैसा त्याग है? शरण में जाना कैसे होगा? गीता में पूजा की अनेकों विधियाँ बताई हैं और कहा है कि यह सब मेरी ही पूजा है। यदि सब भगवान पे छोड़ दिया तो पूजा कैसे करें? मन भ्रम में पड़ गया है, इसका तात्पर्य समझाइये।

सारांश - जब जीव पूर्ण रूप से भगवान के शरणापन्न हो गया तो मानो मन, बुद्धि और अहं, सब भगवान के आदेश के अनुयायी हो गये। या यूँ कह लो कि जीव के तन पर पूर्ण रूप से भगवान का राज्य हो गया, मानो दिनचर्या में 'मेरे' की जगह भगवान के तन का परिचालन होने लगा। यही योग स्थिति है।

प्रश्न अर्पण

गीता में तूने श्याम कहा, अखिल धर्म गर त्यजी आयें।
शरणापन्न तोरे होयें, पाप विमुक्त ही हो जायें।।1।।

कौन धर्म का त्याग करूँ, कैसे त्याग यह होयेगा।
शरण में तेरे कैसे बसूँ, क्योंकर यह सब होयेगा।।2।।

अनेकों पूजा विधि कहीं, कहा सब पूजा तेरी हो।
गर सब धर्म मैं छोड़ दूँ, तो कैसे पूजा तेरी हो।।3।।

भ्रमित मन मेरा हो गया, कुछ तो अब समझाओ तुम।
तात्पर्य निज समझाओ, अशरण शरण बताओ तुम।।4।।

गीता सारांश रस

सत् स्वरूप सत्त्व तत्व, अखण्डता में एक हुए।
ब्रह्म कोण से क्यों न कहें, श्याम सब कुछ कह रहे।।5।।

धर्म त्याग की बात कही, इसके पूर्व भी बहुत कहा।
सम्पूर्ण जब ज्ञान दिया, अंत में यह साधक को कहा।।6।।

पूर्ण पूर्णता में सब हो, गुण बधित सब हो रहा।
त्रिगुणात्मिका शक्ति ने, सम्पूर्ण जग कहें है रचा।।7।।

गुण समझाये गुणन् में, कहा फिर गुण हैं वर्त रहे।
कर्तापन अभिमान तू, कहें साधक काहे करे।।8।।

दैवी सम्पदा भी कही, आसुरी गुण भी कह दिये।
श्रेय पथ प्रेय पथ राज़ द्वौ, विस्तार से अब कह चुके।।9।।

स्थितप्रज्ञ वह कैसा हो, इसके गुण भी कह चुके।
योग स्थित और भक्त है क्या, पूर्ण ही तो कह चुके।।10।।

सूत्रधारी वह आप हैं, अखिलपति भी कह चुके।
अखण्ड केवल आप हैं, है सत् राज्य वह कह चुके।।11।।

आत्म क्या क्या भूत भाव, क्षर अक्षर की कह चुके।
जग चक्र कैसे चले, पूर्ण ही जब कह चुके।।12।।

तत्पश्चात् उन देख कहा, मुझमें मन लगाओ तुम।
पूजन मेरा ही करो, मेरे भक्त बन जाओ तुम।।13।।

याद रहे सत् स्वरूप, सत् की बातें करते हैं।
सत् ध्याओ सत् भजन करो, सत् वर्तो वह कहते हैं।।14।।

जब 'मैं' न रहा कर्ता न रहा, भोक्ता का भी भाव गया।
तन जब उसका हो ही गया, कौन कर्म को' कर लेगा।।15।।

प्रथम कहा जो मान लिया, प्रसाद में स्वतः यही होगा।
जीवन यज्ञ ही होगा, पर राम का ही वह होगा।।16।।

तत्व ज्ञान

तुमरो धर्म तब लौ ही है, जब लौ कर्ता तुम ही हो।
कर्तृत्व भाव जब नहीं रहे, बस भगवान ही कर्ता हो।।17।।

सत् रचित जग सत् ही है, नियंता भी वह सत् ही है।
उपद्रष्टा अनुमंता भी, देख कहें वह सत् ही है।।18।।

भूतभाव उद्भव कर, संग नहीं रह पायेगा।
पाप विमुक्त स्वतः ही, तब साधक हो जायेगा।।19।।

यज्ञ रूप वा जीवन हो, जो भी करे अर्पित करे।
अक्षर ब्रह्म स्वभाव रूप, अध्यात्म में तू स्थित भये।।20।।

कार्य कारण मिलन का, हेतु ब्रह्म प्रकृति भये।
भोक्तृत्व भाव तेरा नहीं रहे, दुःख सुख से तू उठ जाये।।21।।

आसक्ति कहाँ पे रह सके, सत् में भक्ति हो जाये।
कर्म आसक्ति पल में मिटे, तू नैष्कर्म सिद्धि पाये।।22।।

मोह मिटे अज्ञान मिटे, कर्मफल फिर क्या चाहे।
राम करे और वह भोगे, फल जो भी तव घर आये।।23।।

सत् की शरण गये जानो, स्थितप्रज्ञ तू हो जाये।
दैवी गुण सम्पन्न मना, तू फिर आप ही हो जाये।।24।।

गुण प्रभावित क्या करें, जब तन ही राम का हो जाये।
मान अपमान दुःख सुख मिले, राम ही उन सबको पाये।।25।।

सत् शरणापन्न भी समझ, सत् प्रधान जो हो जाये।
विज्ञानमय तोरा जीवन हो, आनन्द ही बाकी रह जाये।।26।।

निरासक्त प्रज्ञा संग रहित, जितेन्द्र तू ही हो जाये।
योग स्थित विशुद्ध बुद्धि, शरणापन्न ही हो पाये।।27।।

अखण्ड भक्ति है पथ जानो, शरणागत जो हो पाये।
हर कर्म वा आश्रय ले, आनन्द प्रसाद में वह पाये।।28।।

सत् हृदय में जिसके बसे, वा जीवन ही पूजा है।
सत् वह आप हो जाये है, सत् बिन कोई न दूजा है।।29।।

विविध विधि बहु ज्ञान दिया, बहु पथ जो समझाये हैं।
सम्पूर्ण का मिलन यहाँ, साधक तुझे बताये हैं।।30।।

ज्ञान-विज्ञान रहित

समझ मना समझायें तुझे, वह सत्य की बात ही कहते हैं।
सत्य की शरण में जाये बसो, वह बार बार यह कहते हैं।।31।।

स्थूल स्तर पे जो भी है, निर्माणित है वह कहते हैं।
मनो लोक बहु विस्तार, नहीं तेरे हाथ वह कहते हैं।।32।।

मान अपमान हानि लाभ, है राम हाथ वह कहते हैं।
बुद्धि भी जिसे तू कहे, है रेखा बंधी वह कहते हैं।।33।।

जो होये वह स्वतः होये, यह जान ले कहते हैं।
सब राम करें भगवान करें, यह मान ले ये कहते हैं।।34।।

राम की शरणा कैसे गहे, राम भजन मन प्रथम करे।
शास्त्रन् में जो सत्य कहे, वा भजन करी कर मान ले।।35।।

तन मन बुद्धि त्रै स्तर पे, राम चरण में छोड़ दे।
हर क्रिया धर्म इसका, सब शरण में छोड़ दे।।36।।

'मैं' शरण में जाये बसे, और 'मैं' फिर कुछ भी न चाहे।
तन यह बने मन यह पाये, या बुद्धि यह हो जाये।।37।।

चक्र यह चलता ही जाये, पर 'मैं' का कहीं पे लेश न हो।
'मैं' शरणापन्न हो जाये, इक कण 'मैं' का शेष न हो।।38।।

को' सोचे यह को' देखे, यह 'मैं' ही तो निरखती है।
'मैं' ही चाहे मान मिले, अपमानित यह 'मैं' करती है।।39।।

‘मैं’ कहे मुझ में गुण यह है, ‘मैं’ कहे जग मान ले।
‘मैं’ कहे मुझे मान मिले, ‘मैं’ कहे जग आन मिले।।40।।

‘मैं’ कहे निर्णय जो मेरा, सर्वश्रेष्ठ वही जान ले।
‘मैं’ कहे मैं कर्ता हूँ, राम मुझे जग मान ले।।41।।

गर ‘मैं’ शरणापन्न हो जाये, ‘मैं’ चरण में खो जाये।
‘मैं’ जो कुछ भी चाहे है, वह चाहना अर्पित हो जाये।।42।।

तन चढ़ा वा चरणन् में, जब दे दिया तब दे दिया।
अब क्या मिला क्या नहीं मिला, ‘मैं’ कहाँ जो देखेगा।।43।।

जब मन दिया राम को, तो रुचि अरुचि फिर कहाँ रहे।
मालिक राम तब हो जाये, राम का मन ही वहाँ बसे।।44।।

अपमान मिले या मान मिले, यह चाहना फिर कौन करे।
जो रुचिकर है वह मैं करूँ, वह मन कहाँ जो कह यह सके।।45।।

जब मन चरण में जाये धरा, यह ‘मैं’ ही था जो न माने।
यह ‘मैं’ ही था जो टोके था, आज ‘मैं’ ही मन न पहचाने।।46।।

जब मन त्यजा तो क्या मिला, किसको मिला को’ देख सके ।
रुचि अरुचि से दूर हुआ, उचित अनुचित की कौन कहे।।47।।

बुद्धि स्तर पे जा देखो, ‘मैं’ ही उसे भड़काये है।
बुद्धि की जग न माने, ‘मैं’ ही शोर मचाये है।।48।।

यह ‘मैं’ राज्य वह चाहे है, बुद्धि को भड़काये यह।
बार बार त्रै स्तर पे जा, जड़ को ही उकसाये यह।।49।।

गर ‘मैं’ वहाँ पर नहीं रहे, तन मन जड़ रह जायेंगे।
बुद्धि के सब निर्णय भी, तब चेतन हो नहीं पायेंगे।।50।।

आभास मात्र यह ‘मैं’ ही है, ज्योति राम से पाती है।
महा ज्योति ‘मैं’ आप हूँ, यह ‘मैं’ ही कहना चाहती है।।51।।

वहाँ बुद्धि समझे आप ही, यह मेरी समझ से है परे।
गर ‘मैं’ बुद्धि संग नहीं मिले, तो बुद्धि नहीं भड़क सके।।52।।

मन की भी यही बात है, तन की भी यही बात है।
जब 'मैं' शरण में जाये पड़े, तब कौन करे यहाँ घात है।।53।।

यह प्रहार जो इनपे करे, उसे 'मैं' ही आज सों जान लो।
तड़पाये जो इस मन को, वह 'मैं' ही है इसे मान लो।।54।।

बुद्धि भी मिथ्यात्व में, रमण निरंतर जो करे।
इस 'मैं' की उकसायी वह, काज भयंकर वह करे।।55।।

जिसने 'मैं' वा शरण धरी, वह 'मैं' राम की हो जाये।
फिर त्रै स्तर पे जो होये, वह स्वतः होता जाये।।56।।

धर्म जितने भी होते हैं, वह तो होते जायेंगे।
गर 'मैं' मिटे राम रहे, राम के सब हो जायेंगे।।57।।

सत् ने निर्णय जो दिया, निर्माणित तन उस कर दिया।
परिस्थिति धरी सामने, स्वभाव वश वह वर्तेगा।।58।।

जो होये सो हो रहा, गुण गुणन् में वर्त रहे।
'मैं' मिली के गुणन् से, बार बार अनर्थ करे।।59।।

गर 'मैं' समझे मुझे सत्य प्रिय, सत्य से प्रीत लगा बैठे।
राम शरण में जाये करी, अपना सीस झुका बैठे।।60।।

'मैं' कहे यह धर्म मेरा, इस बात को वह भुला बैठे।
'मैं' कहे यह मान मेरा, विस्मृत उसे करा बैठे।।61।।

'मैं' कहे यह तन तेरा, तन से ही वह उठ जाये।
यह पल में ही हो जाये, गर चरण में टिक जाये।।62।।

गर शरण में 'मैं' जाये पड़े, जो राम कहे वह मानेगी।
न प्रश्न उठे न भाव उठे, स्वतः ही वह सब मानेगी।।63।।

मान गया अपमान गया, तन गया तनो भाव गया।
रुचि अरुचि भी चली गई, अपना मन ही नहीं रहा।।64।।

बुद्धि चरण में जब धरी, अब निर्णय भी कौन ले।
विधान ही अब निर्णय ले, वह केवल संयोग दे।।65।।

ज्ञान राह से जा तो सके, अपना मन मना सके।
तन राही अनेकों कर्म, जीव शुभ्र बना सके।।66।।

पर शरण में कैसे वह जाये, 'मैं' को नहीं झुका सके।
बिन शरणापन्न होये करी, यह 'मैं' कभी न जा सके।।67।।

प्रिय लगें ऐसे वचन, बहु सुन्दर भी दीखे हैं।
शरण में राम की जा बैठे, सहज बात यह दीखे है।।68।।

पर दर्शन में जो दीखे सहज, जीवन में बहु कठिन है यह।
है तो प्रिय बहु सहज लगे, पर ऐसा सहज भी नहीं है यह।।69।।

महा कठिन यह वाक् है, एतबार वा का न करो।
'मैं' जब लौ है जान लो, शरणापन्न न हो सको।।70।।

यह समझ परे की बात नहीं, ध्यान लगा के देख लो।
क्या कहा भगवान ने, नटखट का वाक् यह देख लो।।71।।

शरण में जा अव्यक्त के, कहो 'शरणापन्न हो गया।
तोरी चरण में आके राम, देख आज मैं खो गया'।।72।।

फिर जो चाहे जग में करे, मान के कारण करता है।
अपमान से पल पल साधक, ऐसा तो नित डरता है।।73।।

तन का मान भी चाहे है, मन का मान भी चाहे है।
बुद्धि निज को श्रेष्ठ कहे, सम्पत्ति सब की चाहे है।।74।।

स्थिर बुद्धि दैवी गुण बिन, कहे शरणापन्न मैं हो गया।
क्यों न कहें मिथ्यात्व में, मूर्ख मन यह खो गया।।75।।

यह जान करी यह मान करी, 'मैं' की बात आज समझ लो।
शरणागत यह 'मैं' ही हो, इसको अब तुम समझ लो।।76।।

वह तन तजे वह मन तजे, बुद्धि त्याग तब होये है।
त्रैलोक को जब 'मैं' छोड़ दे, तब योग ही होये है।।77।।

'मैं' रहे और वह भी रहे, ये तो हो नहीं पायेगा।
या वह रहे या 'मैं' रहे, एक ही रह फिर पायेगा।।78।।

जिस मन त्यजा बुद्धि त्यजी, तन चरण में छोड़ दिया।
समझ मना उस क्या किया, 'मैं पन' अपना छोड़ दिया।।79।।

राम से ऐसा जाये मिला, वह एक रूप ही हो गया।
जो भी श्याम ने कभी कहा, आप वही तो हो गया।।80।।

गर कुछ भी न्यूनता वहाँ रही, समझो शरण में नहीं गया।
गर कण भर भी 'मैं' वा का रहा, जानो समर्पण नहीं हुआ।।81।।

गर 'मेरा' है और 'मैं' भी है, शरण में अभी वह नहीं पड़ा।
जो सीस झुका और पुनः उठा, जानो सीस ही नहीं झुका।।82।।

पल में कदम तोरे मंदिर से, जब उठें पुनि 'मैं' उठे।
बाह्य जाये यह संग करे, समर्पण उसको कौन कहे।।83।।

जिसने सीस झुका दिया, पुनः वह उठ नहीं पायेगा।
लाख रोके जग उसे, वह सत्य छोड़ नहीं पायेगा।।84।।

निज मन ही तड़पाये उसे, वह मौन ही होता जायेगा।
अपनी व्यथा लब पे भी, कबहुँ नहीं वह लायेगा।।85।।

कोई तन कुचले मन तड़पाये, कोई बुद्धि भी ठुकराये।
कुचल कुचल के माटी भये, तड़प वह कबहुँ न पाये।।86।।

जिस दे दिया उस दे दिया, जो शरण पड़ा वह पड़ चुका।
कस अपनाये अब उसको, जिसको चरण में धर चुका।।87।।

सीस दिया जब चरण में, कहा अब मेरी 'मैं' गई।
अब जो तू करे सो किया करे, 'मैं' मेरी यह कहाँ रही।।88।।

सीस झुका कह तो दिया, पर 'मैं' वहाँ पे छूटे न।
शरण में आये कह दिया, तन मन वहाँ पे छूटे न।।89।।

शरणापन्न वह ही होये, जो अपनी न्यूनता जान ले।
राम कोण ही श्रेष्ठ है, सत्यता यह अब मान ले।।90।।

जब जाने निज बुद्धि बल से, वाँछित फल न पा सके।
निज बुद्धि मान्यता भूले गर, तब ही राम अपना सके।।91।।

जो राम कहे वह वही करे, गीता आदेश तब बन जाये।
ज्यों ज्यों इक इक मंत्र पढ़े, वह ही रूप धरता जाये।।92।।

शरणापन्न की रीत यही, जान ले साचो प्रीत यही।
तन मन बुद्धि श्याम को दे, गीता का है गीत यही।।93।।

16.12.1966

गागर में सागर

श्रीमती सत्या महता

जीवन में आनन्द तो राम नाम के आधार पर ही मिलता है। 'सब कुछ भगवान हैं', यह मानते हुए चित्त पावन करने की पुकार उठती है। ऐसा करने में इंसान स्वाधीन होता है, उसका सुख बाह्य परिस्थिति पर आश्रित नहीं होता.. केवल उसकी विचारधारा का रुख प्रेय की ओर से हट कर श्रेय की ओर हो जाता है।

माण्डूक्योपनिषद् में ओंकार की विस्तृत व्याख्या करते हुए ओम् के तीन पाद कहे हैं। ओम् का प्रथम पाद, भगवान के वैश्वानर रूप की सेवा बताया है! हर प्राणी को भगवान का रूप जान कर और मान कर उसकी सेवा में लगना।

साधक जब अपने आन्तर में भगवान की कथनी में और अपनी करनी में भेद देखता है और उसे दूर करने के प्रयत्न करता है तो वह द्वितीय पाद की उपासना करता है। इस सारी प्रक्रिया में 'मैं' का मिटाव तो होने लगता है परन्तु उसका नितान्त अभाव नहीं होता। बीज रूप में अहं रहता है। वह कभी भी बढ़ सकता है, फिर से अहं का विस्तार हो सकता है.. और सारी की हुई साधना पर मानो पानी फिर सकता है। जीव जन्म मरण के चक्र में फँसा रहता है।

गीता में भी कहा है कि ब्रह्म लोक तक पहुँच कर भी जीव की पुनरावृत्ति हो सकती है। ओम् के तृतीय पाद में बताया गया है कि जब अहं का नितान्त अभाव हो जाता है, जब बाह्य या आन्तर में किसी भी बात का प्रभाव प्राणी पर नहीं होता, जब उसका जीवन पूर्णतयः यज्ञमय हो जाता है, उस समय उस राही प्रज्ञा प्रवाहित होती है। तब उसकी 'मैं' राम में समाहित हो जाती है।

जीव की रुचि हो तो लगता है कि वह अपने प्रयत्न से ओम् के प्रथम दो पाद तो पा सकता है, परन्तु इस 'मैं' से पूर्णतयः छुटकारा पाना तो एक असम्भव सी बात लगती है। शास्त्रों में कहा है कि यह तो भगवान की कृपा और करुणा से ही हो सकता है। इसके लिये पुकार अति आवश्यक है। या 'मैं' है या 'भगवान' हैं, दोनों एक साथ स्थापित नहीं हो सकते.. यह समझ तो आ गया पर यहाँ तक पहुँचा कैसे जाये?

पूज्य माँ जीवन में इस सत्य में जीने के लिये सहज विधि बताते हैं। वह दिनचर्या के उदाहरण से हमें इस प्रकार समझाते हैं कि जैसे एक बीज है, उसे धरती में डालकर पानी दिया जाये, गोड़ी करी जाये, उचित पोषण मिले तो वह जैसा बीज हो, वैसा ही पौधा फूटता है। तत्पश्चात् उसका खिलना शुरु होता है, पत्ते, फूल, फल इत्यादि उस पर वैसे ही लगते हैं जैसा बीज हो.. बाहर के गुणों राही वह बीज फलता फूलता है और वृक्ष बन जाता है। उस वृक्ष का कोई पत्ता, कोई टहनी, कोई फूल या फल क्या यह कह सकता है, कि 'मैं इतना सुन्दर इस तरह बना हूँ'।

जिस भाँति जड़ बीज वृक्ष का रूप धर कर फलता, फूलता और बढ़ता है, बिलकुल उसी तरह जीव का संस्कार रूपा बीज भी फूटता और खिलता जाता है। जैसा बीज था, उसी के अनुसार माता-पिता, कुल परिवार, सुख-सुविधा, धन आदि मिले और ऐसी परिस्थितियाँ मिलीं, जिनमें जो भी बर्ताव होना था, होता गया, कर्म भी होते गये। फिर हमने वहाँ क्या किया है अथवा क्या करना है? प्रकृति का नियम तो सब स्थानों में, सर्वत्र एक जैसा ही वर्तता है।

अपने को देखूँ, तो जिस घर में मेरा जन्म स्वतः हुआ, जो परिस्थिति मुझे मिली, क्या यह मेरे कुछ किये पर हुआ? जब अहं की उत्पत्ति नहीं हुई थी, वह सब स्वतः ही होता गया। अब जब अहं उभर पड़ा, तो जीवन में जो हो रहा है, इसमें कर्त्ता भाव क्यों भरूँ?

अन्य जीव जन्तुओं में और मनुष्य में अन्तर इतना ही है कि भगवान ने जीव को बुद्धि दी है, जिस राही वह भगवान की लीला देख सके और साथ ही साथ अपने अहं भाव को भी चेत होकर देख सके तथा उसे भगवान में लीन करता जाये। ऐसे करने से ही परम आनन्द प्राप्त होता है।

करना केवल इतना ही है कि हम द्रष्टा बन कर देखते जायें कि कर्म करने में मेरा कौन सा भाव प्रधान है? क्या कर्म करने में दृष्टि अपने स्वार्थ पर है? क्या ध्यान इस पर टिका है कि मुझे इस के करने में क्या लाभ है अथवा दृष्टि भगवान पर है? क्या मैं यह देख सकता हूँ कि परिस्थिति के रूप में भगवान ही आये हैं? क्या भाव यह है कि दूसरे का हित कैसे हो? या मेरे क्या करने से इसका फायदा होगा?

इस तरह देखने से मेरा अहं मन्द होता जायेगा और अगला बीज अच्छा बनता जायेगा। ऐसा करते करते एक दिन यह अहं इस राम भाव में विलीन हो जायेगी। फिर जो भी इस तन राही बहेगा, वह प्रज्ञा का बहाव ही होगा।

आत्मवान बनने की सहज राह भी यही है। यदि जीवन में एक एक क़दम इसी भाँति चलते जायें, तो भगवान से प्रेम बढ़ने लगेगा.. जब भगवान से प्रीत हो गई, तो स्वतः ही यह अभ्यास होने लगेगा और वैसे ही कर्म होने लगेंगे, जैसे, गर भगवान उस परिस्थिति में होते तो करते। यानि फिर उस के तन राही भगवान ही बहने लगेंगे। स्थूल बीज का उदाहरण पूर्णतया लागू होता है संस्कार रूपा बीज को!

यह ज्ञान, जो परम पूज्य माँ राही मिलता है.. ऐसे लगता है मानो, परम पूज्य माँ ने मन रूपा गागर में ज्ञान सागर ही भर दिया हो। इसे समझने के पश्चात्, जब जीवन में हम इस का मनन और इसे धारण करेंगे, तब ही सफलता सम्भव हो सकेगी। ❖

परम पूज्य माँ

अर्पणा समाचार पत्र

अर्पणा ट्रस्ट, मधुबन,
करनाल, हरियाणा
मार्च 2024

आश्रम समाचार

गृहस्थ आश्रम को क़दम बढ़े

परम पूज्य माँ के दिव्य आशीर्वाद से पिछले दिनों अर्पणा के बच्चे, शुचि व निलय और अर्णव व देविका प्रणय सूत्र में बंधे। समारोह में परम पूज्य माँ द्वारा सरल शब्दों में बताये गये 'वैदिक विवाह' (अर्पणा प्रकाशन) के अनुरूप विधिवत विवाह सम्पन्न हुए।

उर्वशी ललित कला अकादमी के गायकों ने उर्वशी के सुमधुर भजनों से उल्लासपूर्ण वातावरण को और भी दिव्य बना दिया।

विश्व पुस्तक मेले में आकर्षण का केन्द्र बनी माँ द्वारा की गई शास्त्रों की सरल व्याख्या

नई दिल्ली में 10-18 फरवरी तक चले विश्व पुस्तक मेले में परम पूज्य माँ द्वारा की गई शास्त्रों की सहज व्याख्या से आध्यात्मिक विषयों में रुचि रखने वाले और जनसाधारण अत्यन्त प्रभावित हुए.. जिनमें श्रीमद्भगवदगीता, जपुजी साहिब, कई उपनिषद् और वेदांत इत्यादि प्रमुख थे।

विश्व पुस्तक मेले में अर्पणा के स्टॉल पर 'पढ़ाई का मज़ा' कार्यक्रम से जुड़ी महिलाएं डॉ. मृदुला सेठ के साथ

17 फरवरी को अर्पणा के मोलरबंद स्थित शिक्षण केन्द्र में पढ़ रहे छात्रों की माताओं ने भी पुस्तक मेले में अर्पणा के स्टॉल का अवलोकन किया.. वे कार्यात्मक साक्षरता कार्यक्रम की सदस्य भी हैं।

अर्पणा अस्पताल

अर्पणा में एक नये मातृ एवं शिशु विंग का उद्घाटन

11 फरवरी को अर्पणा अस्पताल मधुबन करनाल में श्री हरविंदर कल्याण, विधायक द्वारा एक नये मातृ और शिशु विंग का उद्घाटन किया गया जहाँ चिकित्सा निदेशक, डॉ. आर. आई. सिंह एवं अर्पणा अस्पताल के स्टाफ सदस्य, प्रबन्धन टीम, और अर्पणा के ट्रस्टी भी उपस्थित थे।

अर्पणा की स्त्री रोग विशेषज्ञ डॉ. अनुराधा महाजन, और बाल रोग विशेषज्ञ, डॉ. तेजिंदर खन्ना, इस नई सुविधा से अत्यन्त उत्साहित हुए व उन्होंने रोगियों को करुणापूर्ण व्यक्तिकृत देखभाल देने का प्रण लिया।

गाँव की आशा कार्यकर्ता मातृ व शिशु विंग के खेल कक्ष को देख कर अत्यन्त प्रसन्न हुईं

अर्पणा अस्पताल एवं नेत्र शिविरों में समर्थन के लिए सुश्री नताशा नंदा और बैज नाथ भंडारी पब्लिक चैरिटेबल ट्रस्ट, नई दिल्ली को हार्दिक आभार!

ग्रामीण हरियाणा

अर्पणा द्वारा विश्व विकलांगता दिवस समारोह

14 जनवरी को, अर्पणा के बुढ़ाखेड़ा केंद्र में, संघर्ष महासंघ और अर्पणा ने विश्व विकलांगता दिवस के समारोह का आयोजन किया। घरोंडा से सुश्री आयुषी ठकराल (पैरा एथलीट) यहाँ मुख्य अतिथि थीं।

बच्चों ने चित्रकारी की और महिलाओं ने रंगोली डिज़ाइन बनाए। दौड़ और कबड्डी मुकाबलों ने खूब सुर्खियाँ बटोरीं। बड़ी संख्या में उपस्थित लोगों ने दिव्यांग व्यक्तियों के संगठन के सदस्यों की प्रस्तुतियों का आनंद लिया।

डीपीओ में शामिल होने के बाद दिव्यांगों के जीवन में व्यापक बदलाव को दर्शाता, एक जीवंत नाटक का वहाँ उपस्थित 800 दिव्यांग व्यक्तियों ने खूब आनंद उठाया।

श्री रविंदर बहल, श्रीमती सुषमा लाल एवं बैज नाथ भंडारी पब्लिक चैरिटेबल ट्रस्ट, नई दिल्ली.. अर्पणा, ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में उदारता पूर्ण सहयोग देने के लिए इन सब का अत्यन्त आभारी है।

मोलर बंद, नई दिल्ली में कार्यक्रम

अर्पणा में आनंद का सृजन करते दृष्टिबाधित लोग

9 जनवरी 2024 को, 'नेशनल एसोसिएशन फॉर द ब्लाइंड' के दृष्टिहीन छात्रों ने अर्पणा ट्रस्ट में एक असाधारण संगीतमय कार्यक्रम प्रस्तुत किया।

वहाँ उपस्थित मेहमान एवं एस्सेल फाउंडेशन से श्री हितेश व एनएबी से श्री प्रशांत सहित सभी दर्शक, छात्रों के इस प्रदर्शन से मंत्रमुग्ध हो गये।

अर्पणा की बालवाटिकाओं में गणतंत्र दिवस मनाया गया

24 जनवरी को, अर्पणा के नर्सरी केन्द्रों (बालवाटिकाओं) में उत्साहपूर्वक गणतंत्र दिवस मनाया गया। वहाँ उपस्थित स्वयंसेवक, डॉ. लीना गुप्ता, श्रीमती मीनाक्षी निझावन, श्रीमती साधना चंद्रा, श्रीमती रोमिला कपूर, और श्रीमती बानी राजगढ़िया द्वारा ध्वज फहराया गया।

'अवीवा लाइफ इंश्योरेंस' से श्री गौरव बंका एवं उनके सहकर्मियों ने इसमें भाग लिया। बच्चों ने आकर्षक सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किया जिसमें देश भक्ति के गीत, लोक नृत्य एवं राष्ट्रीय नायकों को चित्रित करने वाले नृत्य प्रस्तुत किये गये।

अतिथियों ने इस सफल आयोजन के लिए शिक्षकों व विद्यार्थियों की भरपूर सराहना करते हुए कहा कि 'उनकी गुणवत्ता प्रतिष्ठित पब्लिक स्कूलों के बराबर थी।'

अर्पणा, अवीवा लाइफ इंश्योरेंस इंडिया, सुरेश शिवदासानी (ओमान) और केयरिंग हैंड फॉर चिल्ड्रेन (यूसीएए) एवं नई दिल्ली से कई अन्य की उदारता- बैज नाथ भंडारी पब्लिक चैरिटेबल ट्रस्ट, एस्सेल सोशल वैलफेयर फाउंडेशन, एफएफबी सर्विसेज़ प्राइवेट लिमिटेड इम्पिरियल ऑटो इंडस्ट्रिज़, जे.आर. सुद प्राइवेट लिमिटेड, आईपीई ग्लोबल, राजवेद फाउंडेशन, एवं सेठ परमानंद चैरिटेबल फाउंडेशन - का हृदय की गहराई से धन्यवाद करता है।

हिमाचल प्रदेश कार्यक्रम

जटकारी किसानों को प्राप्त हुए 500 सेबों के पेड़

29 जनवरी को, अर्पणा ने सुदूर स्थित जटकारी क्षेत्र के महिला एवं पुरुष किसानों को 500 सेबों के पेड़ भेंट में दिये जिन्हें कृषि विज्ञान केंद्र (केवीके) साइप्रस नर्सरी से प्राप्त किया गया था। किसानों को पेड़ लगाने के नये तरीकों के साथ साथ भूमि उपयोग के तरीके, जैसे पेड़ों की कतारों के बीच बीच में सब्जियाँ लगाना इत्यादि के विषय में बताया गया।

हिमाचल प्रदेश में हस्तशिल्प कार्यशाला

28 दिसंबर 2023 को, अर्पणा के गजनोई केंद्र में 'राज्य हथकरघा एवं हस्तशिल्प निगम', चम्बा ब्रांच द्वारा एकदिवसीय प्रदर्शनी का आयोजन किया।

स्वयं सहायता समूहों से 60 महिलाओं को कारीगरों के रूप में शामिल होने के लिए प्रोत्साहित किया गया, जिससे वे ऋण और प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिये लाभांवित हो सकें।

अर्पणा इन कार्यक्रमों का समर्थन करने के लिए नई दिल्ली के उदार दाताओं, श्रीमती सुषमा लाल और बैज नाथ भंडारी पब्लिक चैरिटेबल ट्रस्ट, के प्रति आभारी है।

EMPOWER VULNERABLE WOMEN AND CHILDREN AS THEY REACH FOR THEIR DREAMS!

ARPANA TRUST

EDUCATION FOR DISADVANTAGED CHILDREN

- Tuition support for classes 1-12 pre-school Classes for toddlers, cultural activities.
- Vocational training classes.

DONATE ONLINE

HUMANE VALUES FOR AN EQUITABLE SOCIETY

- Dramas, Publication, Satsangs
- Charitable grants for the vulnerable
- Health/Socio economic assistance

ARPANA RESEARCH & CHARITIES TRUST

PROVIDES MODERN HEALTH CARE THROUGH

- Arpana Hospital for free /affordable health care.
- Arpana Medical centre, Himachal

DONATE ONLINE

EMPOWERING WOMEN

- Self Help Group & SHG Federations.
- Micro – Credit, Income generation, community development

EMPOWERING THE DIFFERENTLY ABLED

- Differently Abled Persons Organizations for health, assistive devices, certifications and income generation.

DONATIONS TO ARPANA ARE 50% TAX EXEMPT UNDER SECTION 80G, INCOME TAX ACT 1961

Cheques in favour of Arpana Trust to be sent to:
Information & Resources Department
Arpana, Madhuban, Karnal- 132037, Haryana
Email: arct@arpana.org | at@arpana.org

Donations through Direct Bank Remittance:
Bank of India, Karnal (IFSC Code: BKID0006750)
Arpana Research & Charities Trust; Bank Account No. 675010100100014,
Arpana Trust Bank Account No. 675010100100001

FOREIGN DONATIONS TO ARPANA TRUST ARE 100% TAX EXEMPT WHEN SENT THROUGH:

Arpana Canada
Mrs. Sue Bhanot, 7 Scarlett Drive, Brampton,
Ontario L6Y 359 Canada
Email: suebhanot@rogers.com

India Development & Relief Fund (IDRF)
Mr. Vinod Prakash, President, IDRF, 5821 Mossrock Drive,
North Bethesda, MD 20852 USA
E mail: vinod@idrf.org

Contact Us: Harishwar Dayal, Executive Director +91 98186 00644
Aruna Dayal, Director Development +91 99916 87310

Email us: arct@arpana.org | at@arpana.org
Websites www.arpana.org www.arpanaservices.org

समय की पुकार - 'श्रीमद्भगवद्गीता!'

आध्यात्मिकता भारत वर्ष में जीवन जीने की सहज शैली है। भौतिकता की चकाचौंध से ऊब कर लोग प्राचीन धर्मग्रंथों की ओर रुख कर रहे हैं। गीता जयंती, कुरुक्षेत्र के युद्ध के मैदान में भगवान श्री कृष्ण द्वारा अर्जुन को दिये गये दिव्य प्रवचनों का स्मरण कराती है। ऐसे ही अवसरों से गीता के गहन दर्शन पर विचार करने एवं उसके अनुरूप जीवन जीने की प्रेरणा मिलती है।

22 दिसंबर 2023 को मनाये गये इस दिन, दुनिया भर से आये भक्तों ने सामूहिक पूजा की और विशेष प्रार्थनाओं में भाग लिया। कुरुक्षेत्र में पवित्र 'ब्रह्म सरोवर' पर 7 से 24 दिसम्बर तक एक मेले का आयोजन किया गया जहाँ सांस्कृतिक कार्यक्रम, श्रीमद्भगवद्गीता का पाठ और बिक्री के लिये स्टॉल लगाये गये.. यहाँ बहुत भारी मात्र में लोग एकत्रित हुए।

'जेनेसिस', करनाल में छात्रों के लिए कोचिंग संस्थान, के डायरेक्टर श्री जितेन्द्र अहलावत ने अर्पणा को भी अपने प्रकाशनों को प्रदर्शित करने का अवसर दिया.. जिससे लोग अर्पणा की पुस्तकें

ख़रीद कर पढ़ सकें। परम पूज्य माँ ने अपने जीवनकाल में हम सब को एक ऐसी निधि दी है जहाँ उन्होंने प्रमुख उपनिषदों, श्रीमद्भगवद्गीता और अन्य वेदांतिक विषयों की व्याख्या की.. एवं जिन्हें बाद में प्रकाशित और मुद्रित किया गया।

परम पूज्य माँ द्वारा व्याख्या की गई इस श्रीमद्भगवद्गीता से 'जेनेसिस' के निदेशक श्री जितेन्द्र अहलावत इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने इसे अपने कोचिंग सेन्टर के पाठ्यक्रम का एक अभिन्न अंग बना लिया है। इसलिए उनकी इच्छा थी कि हमारी पुस्तकें, विशेषकर श्रीमद्भगवद्गीता, इस गीता जयंती महोत्सव के माध्यम से अधिक से अधिक लोगों तक पहुँचे।

यह मेला अत्यन्त सफल रहा। कई लोगों ने अर्पणा के प्रकाशनों में गहरी दिलचस्पी दिखाई और कई लोगों ने गीता का नियमित रूप से एक श्लोक पढ़ने का संकल्प लिया.. अर्पणा की श्रीमद्भगवद्गीता के लिए इतनी भारी प्रतिक्रिया का श्रेय सूबेदार रविंदर कौशिक को जाता है जो कुरुक्षेत्र के 'जेनेसिस सेंटर' में छात्रों को प्रेरित करने की भूमिका निभाते हैं।

'जेनेसिस' से स्वयंसेवक हर्ष ने भी स्टॉल पर हमारी बहुत सहायता की। अर्पणा के प्रकाशनों के प्रदर्शन का यह सुअवसर देने के लिए हम 'जेनेसिस' के अत्यन्त आभारी हैं।